मनुष्यता तथा बर्बता का खुला हुआ मुकाबला

लेखक (उर्दू) : बाबू महावीर प्रसाद श्रीवास्तव
हिन्दी अनुवादक : बी0 ए0 नक़वी नसीराबादी

प्रत्येक देश, जाति और धर्म में कुछ न कुछ लोग ऐसे हुए हैं, जिन्होंने अपनी सांसारिक आवश्यकताओं को, अल्लाह के न्याय को जीवित रखने के लिए अपर्ण कर दिया। ऐसे मनुष्य मानव इतिहास में जीवित हैं और सदैव जीवित रहेंगे, उनकी याद भी समयानुसार मनाई जाती है, परन्तु संसार की तमाम घटनाओं और कुर्बानी की श्रेष्ठतम उदाहरणों में, इमाम हुसैन, उन के सम्बन्धियों और मित्रों की शहादत एक ऐसी घटना है, जिसका जवाब किसी दूसरी जगह नहीं मिलता। यही कारण है कि इस शहादत से बिना जाति–पाति, धर्म, सम्प्रदाय, और प्रत्येक भौगोलिक विशेषताओं से अलग रहकर, तमाम लोग चाहे उनका सम्बन्ध किसी भी देश से क्यों न हो, प्रभावित हुए हैं और इस घटना की याद इस तरह मनाई जाती है, जिसका उदाहरण भी और कहीं नहीं मिलता है।

इमाम हुसैन की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए इतना कह देना पर्याप्त है कि कर्बला की इस अमर घटना का चौदह सौ वर्ष समाप्त हो जाने के पश्चात भी यह शोक इतना नवीन है, जैसे यह शहादत कल ही घटित हुई थी। प्रत्येक वर्ष मोहर्रम का चांद निकलते ही, हम को यह याद आ जाता है कि इमाम हुसैन अपनी मातृ–भूमि को छोड़ने पर विवश कर दिये गये थे और मरूस्थलों और वनों का गर्मी के दिनों में यात्रा करके कर्बला पंहुचे थे। जहां से उन को आगे बढ़ने की आज्ञा नहीं दी गई।

दूसरी मोहर्रम को उन के ख़ेमे (तम्बू) दरिया (नदी) से दूर जलती और तपती भूमि पर लगवाए गये, सातवीं मोहर्रम से पानी बन्द कर दिया गया और युद्ध छिड़ जाने का सारा प्रबन्ध नवीं मोहर्ररम तक सम्पूर्ण हो गया। इमाम हुसैन ने अपने शत्रुओं से एक रात का अवकाश मांगा और दूसरे दिन अर्थात् दसवीं मोहर्रम की वह और उन के साथी एक–एक करके शहीद कर दिये गये। इमाम हुसैन ने इस भीषण युद्ध काल में भी यह प्रस्ताव प्रस्तुत किया कि अगर उन को छोड़ दिया जाए तो वह यज़ीद के राज्य और समस्त अरब देश से असम्बन्धित हो भारत वर्ष चले जाएंगे, लेकिन उन के शत्रुओं को यह सहन न हो सका कि वह मुस्लिम देश से बाहर निकल कर अपने हिन्दु मित्रों के शरण में जीवित रह सकें।

इतिहास का अध्ययन हम को यह सोचने पर विवश करता है कि आखिर शत्रु इमाम हुसैन को जीवित न रहने देने पर इतना व्याकुल क्यों था! कहा गया था कि इमाम हुसैन यज़ीद की बैअत (शपथ ग्रहण करना) कर लें और अगर वह बैअत न करें तो उन को वध कर दिया जाय। वर्तमान दशा समक्ष है, बैअत का यह अर्थ था कि इमाम हुसैन, जो सभ्यता, मनुष्यता, ईमानदारी, सच्चाई, न्याय तथा पवित्रता की मुर्ति थे, एक ऐसे व्यक्ति के आगे सिर झुका देते, जो किसी ईमानदार आदमी के सम्मुख आत्मिक, नेता होना तो दूर की बात सांसारिक राज्य के भी योग्य न था। इमाम हुसैन का हृदय कुचला नहीं जा सकता था, उनके लिए उनका वध कर दिया जाना सरल था। अपने हृदय की पवित्रता को सदैव के लिए जीवित बना देना उन के लिए आवश्यक हो गया। इस कारण वह अपने वध किये जाने पर ही टिके न रहे, बल्कि एक दिन के कुछ घण्टों में ऐसे बहत्तर साथियों की कुर्बानियां दे दीं जिन को वह बड़ी अच्छी तरह परख कर और अरब के समाज से चुन कर और अपने सोचे समझे उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए कर्बला लाए थे। इन बहत्तर साथियों में ऐसे बृद्ध भी थे, जिन को

आंखों से देखने के लिए पपोटे ऊपर खींचकर रूमाल से बांधना पड़े और घोड़े पर बैठने के लिए कमर को कस कर बांधना भी पड़ा और इन्हीं बहत्तर में नाबालिग़ (अव्यस्क) बच्चे भी थे, जिन में एक छः महीने का दूध पीता बालक भी था। इन शहीदों की जीवनियां पढ़कर बरबस यह कहना ही पड़ता है कि कर्बला के मैदान में मनुष्यता और बर्बता का खुला हुआ मुक़ाबला था, जिस में शहीद होने वालों ने अपनी जान की बाज़ी लगा कर मैदान जीत लिया।

इन समस्त घटनाओं व समयों के सम्मुख यह कहना ही पड़ता है कि इमाम हुसैन ने मनुष्यता को उच्च्य स्थान दिया और सज्जनता का सिर गर्व से ऊंचा हो गया। इस लिए हर व्यक्ति के वास्ते जिस के हृदय में मनुष्यता की श्रेष्ठता और व्यक्तित्व का दर्द है, यह आवश्यक है कि वह इमाम हुसैन की याद बनाए रखे और कर्बला की घटना से अपने दैनिक जीवन में पाठ लेता रहे। इमाम हुसैन के व्यक्तित्व से लेश मात्र भी प्रभावित हो जाने से हम में बहुत सी विशेषताऐं उत्पन्न हो सकती हैं और उन की याद हमको धार्मिक कट्टरता के स्तर से ऊंचा करके मनुष्यों की बीच में भाई–चारे का सम्बन्ध स्थापित करती है। मोहर्रम की मजलिसों को अगर धार्मिक रीति–रिवाज मान भी लें, तो शायद यही एक ऐसी रीति–रिवाज है, जिसमें प्रत्येक धर्म का व्यक्ति बराबरी के नाते एक तरह से बैठकर बराबर से सम्मिलित हो सकता है। यही वह धार्मिक सभा है, जिस में प्रत्येक धार्मिक विचार का व्यक्ति, केवल मनुष्य होते हुए एक सम्पुर्ण व्यक्ति की याद में, सांसारिक मोह को त्याग कर, आत्मिक विशेषताओं से प्रफुल्लित होते हुए अपने जीवन के हेतु आदर्श प्राप्त करता है। 

(इमामिया मिशन लखनऊ का प्रकाशन नं0 484 मोहर्रम 1386 हि0 /अप्रैल 1966)

ज़िन्दगी सकीना की

बिन्ते ज़हरा नक़वी नदल हिन्दी साहिबा

सब्र की अलामत है ज़िन्दगी सकीना की
बन्दगी की रिफ़अत है ज़िन्दगी सकीना की
मश्क ये अलम में है या अतश की है तारीख़
मक़सदी इशाअत है ज़िन्दगी सकीना की
ज़िन्दगी–ए–सरवर है उलफ़ते सकीना में
और पदर की उलफ़त है ज़िन्दगी सकीना की
इस तरह बलाओं में लोग मर ही जाते हैं
कोहे अज़्मो हिम्मत है ज़िन्दगी सकीना की
अब हुसैन की सूरत सरपरस्त हैं ज़ैनब
उनको एक दौलत है ज़िन्दगी सकीना की
हक़ के वास्ते जीना हक़ के वास्ते मरना
किस क़दर हक़ीक़त है ज़िन्दगी सकीना की
मश्क दे के अम्मू को सर झुका के कहती हैं
आपकी बदौलत है ज़िन्दगी सकीना की
जुरअते सकीना से हिम्मतों को निस्बत है
अज़्म से इबारत है ज़िन्दगी सकीना की
ज़िन्दगी रहे हक़ में बहरे रब बसर की है
कुल की कुल इबादत है ज़िन्दगी सकीना की
मक़सदे सकीना से है नदा को बस निस्बत
शायरी की क़िस्मत है ज़िन्दगी सकीना की

(पेज नं0 24 का बक़िया...................)

उसे अवगुणी तथा पापी कहा हैः–

है हमारे अवगुणों की भी न हद।
हाय गरदन भी उधर फिरती नहीं।।
देख करके दूसरों का दुख दर्द।
आंख से दो बूंद भी गिरती नहीं।।

ऐ अल्लाह! तू उन मनुष्यों को सुबुद्धि प्रदान कर जो इन दुश्यों को सुनकर विलाप नहीं करते एंव शोक मनाने वालों को खिल्ली पात्र समझते हैं उन पर हंसते हैं एंव रोने सी स्वाभाविक, प्राकुतिक वस्तु को घृणा दृष्टि से देखते हैं। हमारे लखनऊ के एक नवयुवक उच्च कवि 'माथुर' जी ने इसको भली प्रकार प्रदर्शित किया हैः–

इन्सान तो ग़म का आदी है।
फ़ितरत के लिए ग़म होता है।
मज़लूम अगर मरता है कोई।
हर क़ौम में मातम होता है।।

परन्तु केवल विलाप करना हीं पर्याप्त न होगा अपितु इमाम हुसैन का बलिदान जो ईश–भक्ति दृढ़ निश्चय, अडिग वीरता, धीरता, वचन पालन एंव कर्तव्यपरायण्ता आदि सदगुणों को संदेश एंव शिक्षा दे रहा है, उसका भी पालन करना होगा। तभी हम इस योग्य होंगे कि हुसैन के प्रेमी कहलाऐं।

(इमामिया मिशन, लखनऊ प्रकाशन नं0 262)